माननीय न्यायमूर्ति *राजेंद्र नाथ मित्तल के समक्ष*

सुरेश कुमार - प्रतिवादी-अपीलकर्ता।
बनाम
भीम सैन - वादी-प्रतिवादी
1976 की नियमित द्वितीय अपील संख्या 344
14 सितंबर, 1978

हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली पर नियंत्रण) अधिनियम (1973 का यू) - धारा 1 और 12 - हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली का नियंत्रण) संशोधन अधिनियम (1978 का XVI) - धारा 2 - संपत्ति को अधिनियम के प्रावधानों से छूट प्राप्त है - संशोधन अधिनियम की धारा 2 - संशोधन से पहले ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित डिक्री - क्या पूर्वव्यापी - संशोधन से पहले ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित डिक्री - अपीलीय न्यायालय - क्या कानून में बदलाव को ध्यान में रखने के लिए बाध्य है - डिक्री पारित करने के लिए सिविल कोर्ट का अधिकार क्षेत्र निष्कासन की संख्या- चाहे प्रतिबंधित हो।
यह अभनिर्धारित किया गया कि हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली का नियंत्रण) संशोधन अधिनियम, 1978 की धारा 2 द्वारा हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली का नियंत्रण) अधिनियम, 1973 की धारा 1 की उप-धारा (3) को मूल अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख से प्रतिस्थापित किया गया था। उक्त धारा स्पष्ट शब्दों में कहती है कि उप-धारा को हमेशा प्रतिस्थापित माना जाएगा। संशोधन अधिनियम की धारा 2 की भाषा स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि संशोधन पूर्वव्यापी प्रभाव से किया गया है।

(पैरा 5)
यह अभनिर्धारित किया गया कि यह कानून का एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि देश के प्रक्रियात्मक कानून के तहत अपील की सुनवाई पुन: सुनवाई की प्रकृति में है और इसलिए अपील में दी जाने वाली राहत को ढालने में, एक अपीलीय अदालत उन तथ्यों और घटनाओं को भी ध्यान में रखने की हकदार है जो डिक्री पारित होने के बाद से अस्तित्व में आए हैं। यह निर्धारित करने में कि न्याय की क्या आवश्यकता है, न्यायालय किसी भी बदलाव पर विचार करने के लिए बाध्य है, या तो वास्तव में या कानून में, जो निर्णय दर्ज होने के बाद से अतिरंजित है।

(पैरा 6)
यह अभनिर्धारित किया गया कि हरियाणा किराया अधिनियम के पारित होने के बाद, उक्त अधिनियम द्वारा शासित किराए के भवनों और भूमि के संबंध में किरायेदारों के खिलाफ निष्कासन के लिए डिक्री पारित करने के लिए सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र को छीन लिया गया है।

(पैरा 8)
भिवानी के जिला न्यायाधीश की अदालत के दिनांक 23 जनवरी, 1976 के आदेश से नियमित द्वितीय अपील, जिसमें भिवानी के वरिष्ठ उप-न्यायाधीश द्वारा दिनांक 12 अगस्त, 1975 को की गई निर्णय की पुष्टि की गई है, जिसमें वादी को विवादित दुकान को जुर्माने सहित कब्जे में लेने की डिक्री प्रदान की गई है। निचली अपीलीय अदालत ने आगे आदेश दिया कि वादी-प्रतिवादी अपीलकर्ता प्रतिवादी से दुकान का भौतिक कब्जा वसूलने का हकदार होगा।

एच. एल. सरीन, वरिष्ठ अधिवक्ता और सी. बी. कौशिक, अधिवक्ता, आवेदक की ओर से।
अरुण जैन के साथ जी. सी. मित्तल प्रतिवादी की ओर से अधिवक्ता।

निर्णय

माननीय न्यायमूर्ति राजेंद्र नाथ मित्तल-

1) यह निर्णय 1976 के आरएसए नंबर 344 और 345 और 1977 के आरएसए नंबर 1518 का निपटारा करेगा, जिसमें कानून के सामान्य प्रश्न शामिल हैं। फैसले में तथ्य 1976 के आरएसए नंबर 344 से दिए जा रहे हैं।
2) भीम सैन वादी उस दुकान का मालिक है जिसका निर्माण कथित तौर पर वर्ष 1966 में किया गया था। इसे 26 अप्रैल, 1967 से 21 अप्रैल, 1968 तक प्रतिवादी को 100 रुपये और नगरपालिका करों के मासिक किराए पर दिया गया था, 26 अप्रैल, 1967 के पट्टे विलेख के माध्यम से। यह आगे कहा जाता है कि प्रतिवादी ने विवाद में दुकान के मूल्य और उपयोगिता को कम कर दिया। नतीजतन, उन्होंने प्रतिवादी को नोटिस देने के बाद, उसे निकालने के लिए एक मुकदमा दायर किया, जिसमें कहा गया कि इमारत को हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली का नियंत्रण) अधिनियम, 1973 (इसके बाद हरियाणा किराया अधिनियम के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों से छूट दी गई थी। प्रतिवादी ने विभिन्न आधारों पर मुकदमे का विरोध किया था। विद्वान ट्रायल कोर्ट ने वादी के मुकदमे का फैसला सुनाया। प्रतिवादी भिवानी के जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील में गया, जिन्होंने ट्रायल कोर्ट के फैसले और डिक्री की पुष्टि की और इसे खारिज कर दिया। वह इस न्यायालय में दूसरी अपील में आया है।
3) अपीलकर्ता के वकील श्री सरीन द्वारा यह तर्क दिया गया है कि हरियाणा किराया अधिनियम को हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली का नियंत्रण) संशोधन अधिनियम, 1978 (इसके बाद संशोधन अधिनियम के रूप में संदर्भित) द्वारा संशोधित किया गया है, जिसके आधार पर अन्य बातों के साथ-साथ हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 1 में संशोधन किया गया था। विद्वान वकील ने आगे कहा कि धारा 1 के संशोधन के मद्देनजर, विवाद में संपत्ति अब हरियाणा किराया अधिनियम के दायरे से मुक्त नहीं है, और परिणामस्वरूप अपीलकर्ता के खिलाफ निष्कासन के लिए डिक्री पारित करने के लिए सिविल कोर्ट का अधिकार क्षेत्र समाप्त हो गया है। वकील के अनुसार, यदि ऐसा है, तो सिविल कोर्ट द्वारा पारित निष्कासन की डिक्री को अकेले इस आधार पर रद्द किया जा सकता है।
4) मैंने विद्वान वकील के तर्क पर एक विचारशील विचार किया है। इस प्रश्न को निर्धारित करने के लिए हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 1 और 13 और संशोधन अधिनियम की धारा 2 को पुन: पेश करना प्रासंगिक होगा:-

1. संक्षिप्त शीर्षक और सीमा:-
    1) .....
    2) .....
    3) इस अधिनियम की कोई बात इस पर लागू नहीं होगी-
        1) कोई भी आवासीय भवन जिसका निर्माण इस अधिनियम के लागू होने पर या उसके बाद इसके पूरा होने की तारीख से दस साल की अवधि के लिए पूरा हो गया है;
        2) (ii) कोई भी गैर-आवासीय भवन निर्माण जिसका निर्माण 31 मार्च, 1962 के बाद पूरा हुआ है;
        (iii) 31 मार्च, 1962 को या उसके बाद किराए की कोई भी भूमि

13. किरायेदारों को बेदखल करना:-

(1) इस धारा के प्रावधानों के अनुसार भवन या किराए की भूमि के कब्जे वाले किरायेदार को इस धारा के प्रावधानों के अनुसार बेदखल नहीं किया जाएगा।

(2) एक मकान मालिक जो अपने किरायेदार को बेदखल करना चाहता है, वह नियंत्रक को उस संबंध में निर्देश के लिए आवेदन करेगा। यदि नियंत्रक, किरायेदार को आवेदन के खिलाफ कारण दिखाने का उचित अवसर देने के बाद, संतुष्ट है,

संशोधन अधिनियम की धारा 2 निम्नानुसार है:-

"2. 1973 के हरियाणा अधिनियम II की धारा 1 का संशोधन,-

हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली नियंत्रण) अधिनियम, 1973 की धारा 1 की उप-धारा (3) (इसके बाद इसे प्रमुख अधिनियम के रूप में संदर्भित) के लिए, निम्नलिखित उप-धारा प्रतिस्थापित की जाएगी और हमेशा उसे प्रतिस्थापित माना जाएगा, अर्थात्:-

(3) इस अधिनियम की कोई बात किसी ऐसे भवन पर लागू नहीं होगी जिसका निर्माण इस अधिनियम के प्रारंभ में या उसके बाद इसके पूरा होने की तारीख से दस वर्ष की अवधि के लिए पूरा हो गया है।"

धारा 1 (3) (ii) को पढ़ने से, यह स्पष्ट है कि हरियाणा किराया अधिनियम एक गैर-आवासीय भवन निर्माण पर लागू नहीं होता है, जिसका निर्माण 31 मार्च, 1962 के बाद पूरा हुआ था। इसी तरह, यह 31 मार्च, 1962 को या उसके बाद किराए की जमीन पर लागू नहीं था। हालांकि, आवासीय भवनों के संबंध में स्थिति थोड़ी अलग थी। हरियाणा किराया अधिनियम के संचालन से उन आवासीय भवनों को छूट दी गई थी, जो अधिनियम के लागू होने पर या उसके बाद पूरा हो गए थे, पूरा होने की तारीख से दस साल की अवधि के लिए। उक्त अवधि समाप्त होने के बाद, यह ऐसी इमारतों पर भी लागू हो गया। हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 1 की उप-धारा (3) को संशोधन अधिनियम की धारा 2 द्वारा संशोधित किया गया था, जिसके द्वारा आवासीय और गैर-आवासीय भवनों के बीच कोई अंतर नहीं रखा गया था और सभी भवनों के बारे में कानून को एक समान बनाया गया था। नए प्रावधान के अनुसार, हरियाणा किराया अधिनियम अधिनियम के लागू होने पर या उसके बाद पूरी हुई इमारतों को छोड़कर सभी इमारतों पर लागू किया गया था। यह भी प्रावधान किया गया था कि अधिनियम के लागू होने के बाद या उसके बाद पूरी की गई इमारतों को उनके पूरा होने की तारीख से 10 साल तक हरियाणा किराया अधिनियम द्वारा शासित नहीं किया जाएगा। इसे किराए की भूमि पर भी लागू किया गया था, चाहे वह शुरू होने से पहले हो या बाद में।

5) अब देखना यह है कि हरियाणा रेंट एक्ट अपने संचालन में रेट्रोस्पेक्टिव है या नहीं? सरीन ने जोरदार तर्क दिया है कि संशोधन अधिनियम की भाषा स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि इसे पूर्वव्यापी प्रभाव दिया गया था। दूसरी ओर, श्री जीसी मित्तल का तर्क है कि यह पूर्वव्यापी प्रभाव में नहीं है। उन्होंने मोती राम बनाम सूरजभान और अन्य (1) मामले में उच्चतम न्यायालय के एक फैसले का हवाला दिया। तथापि, मैं श्री सरीन के इस तर्क से प्रभावित हूं। संशोधन अधिनियम की धारा 2 में रेखांकित भाग (इटैलिक में) किसी भी संदेह की छाया से परे स्थापित करता है कि हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 1 की उप-धारा (3) को मूल अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख से प्रतिस्थापित किया गया था। उक्त धारा स्पष्ट शब्दों में कहती है कि उप-धारा को हमेशा प्रतिस्थापित माना जाएगा। महत्वपूर्ण शब्दों पर जोर देने के लिए मेरे द्वारा उन्हें रेखांकित किया गया है। इन शब्दों के साथ कोई अन्य अर्थ नहीं जोड़ा जा सकता है, सिवाय इसके कि मूल उप-धारा (3) को हटा दिया गया था और मूल

अधिनियम की शुरुआत से ही नई उप-धारा को प्रतिस्थापित किया गया था। अनुभाग की भाषा स्पष्ट है और ऊपर दिए गए एक के अलावा कोई अन्य व्याख्या नहीं की जा सकती है। श्री मित्तल द्वारा संदर्भित मोती राम (सुप्रा) का मामला, मेरे द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण की पुष्टि करता है। अदालत की ओर से बोलते हुए गजेंद्रगडकर, जे. ने कहा कि यह अच्छी तरह से तय है कि जहां एक संशोधन निहित अधिकारों को प्रभावित करता है, संशोधन तब तक भावी प्रभाव से काम करेगा जब तक कि इसे स्पष्ट रूप से पूर्वव्यापी नहीं बनाया जाता है या इसका पूर्वव्यापी संचालन आवश्यक निहितार्थ के रूप में होता है। वर्तमान मामले में, संशोधन अधिनियम की धारा 2 की भाषा स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि संशोधन पूर्वव्यापी प्रभाव से किया गया है। अत, मुझे इस विवाद में कोई दम नजर नहीं आता।

6) अब मैं श्री सरीन के इस तर्क का उल्लेख करूंगा कि क्या हरियाणा किराया अधिनियम में संशोधन के बाद सिविल न्यायालय को निष्कासन की डिक्री पारित करने का अधिकार है। यह कानून का एक अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि देश के प्रक्रियात्मक कानून के तहत अपील की सुनवाई फिर से सुनवाई की प्रकृति में है और इसलिए अपील में दी जाने वाली राहत को ढालने में, और अपीलीय न्यायालय उन तथ्यों और घटनाओं को भी ध्यान में रखने का हकदार है जो डिक्री पारित होने के बाद से अस्तित्व में आए हैं। यह निर्धारित करने में कि न्याय की क्या आवश्यकता है, न्यायालय किसी भी बदलाव पर विचार करने के लिए बाध्य है, या तो वास्तव में या कानून में, जो निर्णय दर्ज होने के बाद से अतिरंजित है। (देखें सुरिंदर कुमार और अन्य बनाम ज्ञान चंद और अन्य 1958 सुप्रीम कोर्ट अपील 412। संशोधन अधिनियम 8 मई, 1978 से लागू हुआ, जब इसे हरियाणा राजपत्र (अतिरिक्त) में प्रकाशित किया गया था। यह न्यायालय उस तारीख से पहले पारित डिक्री के खिलाफ अपील ों पर निर्णय लेते समय उक्त अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रख सकता है।

7) हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 13 (1) में कहा गया है कि एक किरायेदार जो किसी भवन या किराए की भूमि के कब्जे में है, उसे उस धारा के प्रावधानों के अनुसार बेदखल नहीं किया जाएगा। उप-धारा (2) इजेक्टेशन के लिए आवेदन करने की प्रक्रिया निर्धारित करती है। धारा के अनुसार, एक मकान मालिक, अपने किरायेदार को बेदखल करने के लिए, उस उद्देश्य के लिए नियंत्रक को आवेदन करना होगा। 'नियंत्रक' शब्द को हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 2 (बी) में परिभाषित किया गया है और इसका अर्थ है कोई भी व्यक्ति जिसे राज्य सरकार द्वारा उस अधिनियम के तहत नियंत्रक के कार्यों को करने के लिए नियुक्त किया गया है। यह भी स्पष्ट है कि निष्कासन का आदेश देने से पहले नियंत्रक को स्वयं को संतुष्ट करना होगा कि मकान मालिक का मामला उक्त अधिनियम की धारा 13 (2) और (3) के तहत किसी भी खंड के अंतर्गत आता है। धारा 13 की उपधारा (1), (2) और (3) को पढ़ने से, मेरे मन में कोई संदेह नहीं रह जाता है कि विधायिका का इरादा था कि केवल हरियाणा किराया अधिनियम के तहत प्रदान किए गए न्यायाधिकरणों के पास किरायेदार को निकालने का आदेश देने का अधिकार क्षेत्र होना चाहिए। विधायिका निहितार्थ द्वारा सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को बाहर कर सकती है। हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 13 की भाषा से यह स्पष्ट है कि विधायिका ने अपने द्वारा शासित मामलों के संबंध में निहितार्थ द्वारा सिविल न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को बाहर रखा।

8) मुझे उक्त उप-धाराओं की तुलना पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम, 1949 (इसके बाद ई.पी. किराया अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 13 (1) के साथ तुलना से भी समर्थन मिलता है, जहां विधायिका द्वारा इसके विपरीत विधायिका की मंशा दिखाते हुए एक अलग भाषा का उपयोग किया गया है। अनुभाग का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

13. किरायेदारों की बेदखली-

> (1) किसी भवन या किराए की भूमि के कब्जे वाले किरायेदार को इस अधिनियम के लागू होने से पहले या बाद में पारित डिक्री के निष्पादन में या अन्यथा और चाहे किरायेदारी की समाप्ति से पहले या बाद में इस धारा के प्रावधानों के अनुसार, या धारा के तहत किए गए आदेश के अनुसरण में बेदखल नहीं किया जाएगा। पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम, 1947 की धारा 13, जैसा कि बाद में संशोधित किया गया था।

ई.पी. किराया अधिनियम की धारा 13 (1) में यह प्रावधान किया गया है कि एक किरायेदार को उस धारा के प्रावधानों के अनुसार, अधिनियम के लागू होने से पहले या बाद में पारित डिक्री के निष्पादन में किसी भवन या किराए की भूमि से बेदखल नहीं किया जा सकता है। "इस अधिनियम के लागू होने से पहले या बाद में पारित डिक्री के निष्पादन में" शब्द (मेरे द्वारा रेखांकित; रिपोर्ट में इटैलिक में) महत्वपूर्ण हैं। इन शब्दों से पता चलता है कि ई.पी. किराया अधिनियम के प्रारंभ होने के बाद एक सिविल कोर्ट द्वारा निष्कासन के लिए एक डिक्री पारित की जा सकती है। इस प्रकार, किसी भूमि या किराए की भूमि के संबंध में अपने किरायेदार के खिलाफ मकान मालिक द्वारा निष्कासन के मुकदमे में डिक्री पारित करने के लिए सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र को विधायिका द्वारा ई.पी. किराया अधिनियम लागू करके नहीं छीना गया था। धारा 13 (1) को पढ़ने से यह भी स्पष्ट होता है कि किसी भवन या किराए की भूमि के कब्जे वाले किरायेदार को इस तरह के आदेश के निष्पादन में बेदखल नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, एक सिविल कोर्ट द्वारा पारित एक डिक्री को निष्पादन योग्य नहीं बनाया गया है। मकान मालिक को कब्जा तभी मिल सकता है जब किराया नियंत्रक ने ई.पी. किराया अधिनियम की धारा 13 के प्रावधान के अनुसरण में किरायेदार को निकालने का आदेश दिया हो। इस दृष्टिकोण से मैं शाम सुंदर बनाम राम दास (3) मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय की टिप्पणियों से दृढ़ हूं। पूर्ण पीठ की ओर से बोलते हुए हरनाम सिंह, जे ने कहा कि पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम, 1947 की धारा 13, बेदखली के लिए डिक्री देने के लिए सिविल अदालतों के अधिकार क्षेत्र को बाहर नहीं करती है, बल्कि किरायेदारों को बेदखल करने के लिए प्रक्रिया निर्धारित करके इस तरह के डिक्री के निष्पादन को नियंत्रित करती है। यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम, 1947 की धारा 13 की भाषा ई.पी. किराया अधिनियम की धारा 13 की भाषा के साथ मेल खाती है। पूर्ण पीठ की टिप्पणियां ई.पी. किराया अधिनियम के लागू होने के बाद किरायेदारों के खिलाफ पारित निष्कासन के आदेशों के मामलों में पूरी तरह से लागू होती हैं। साधु सिंह बनाम जिला बोर्ड, गुरदासपुर और 1962 के एक अन्य मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने भी यही दृष्टिकोण अपनाया था। डिवीजन बेंच ने पाया कि पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम की धारा 13 (1) निष्कासन के लिए डिक्री पारित करने के लिए अदालत के अधिकार क्षेत्र को प्रभावित नहीं करती है। इस प्रकार, हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 13 (1) और ईपी किराया अधिनियम की धारा 13 (1) की तुलना से, यह स्पष्ट है कि पूर्व मामले में विधायिका ने एक किरायेदार के खिलाफ निष्कासन के लिए डिक्री पारित करने से सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र को छीन लिया है, जबकि बाद के मामले में इसे दूर नहीं किया गया था, लेकिन इस तरह के फरमान के निष्पादन पर एक नियंत्रण रखा गया था। उपर्युक्त चर्चा से यह पता चलता है कि हरियाणा किराया अधिनियम के पारित होने के बाद, उक्त अधिनियम द्वारा शासित किराए के भवनों और भूमि के संबंध में किरायेदारों के खिलाफ निष्कासन के लिए डिक्री पारित करने के लिए सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र को छीन लिया गया है।

9) मित्तल ने तब आग्रह किया कि विवादित दुकान का निर्माण वर्ष 1966 में किया गया था और हरियाणा किराया अधिनियम के अनुसार, जैसा कि संशोधित किया गया है, दुकान को इसके पूरा होने की तारीख से दस साल की अवधि के लिए अधिनियम के प्रावधानों से छूट दी गई थी। उनके

अनुसार हरियाणा किराया अधिनियम के प्रावधान वर्ष 1976 तक दुकान पर लागू नहीं होते थे। मैं इस विवाद से भी प्रभावित नहीं हूं। हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 1(3) की भाषा में यथा संशोधित यह दर्शाया गया है कि उक्त अधिनियम के प्रावधान उस भवन पर लागू होते हैं जिसका निर्माण उस अधिनियम के प्रारंभ में या उसके बाद उसके पूरा होने की तारीख से दस वर्ष की अवधि के लिए किया गया था। वकील हरियाणा किराया अधिनियम की असंशोधित धारा 1 (3) के प्रावधानों का कोई लाभ नहीं ले सकते क्योंकि संशोधन को पूर्वव्यापी प्रभाव दिया गया है। संशोधन के बाद यह माना जाएगा कि मूल धारा 1 (3) कभी भी लागू नहीं हुई। इसलिए, मैं विद्वान वकील की दलील को अस्वीकार करता हूं।

10) वर्तमान मामले में तथ्यों के संबंध में कोई विवाद नहीं है। विवाद में दुकान का निर्माण 1966 में किया गया था। हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 13 के साथ धारा 1 (3) के संशोधन के मद्देनजर, सिविल कोर्ट को मकान मालिक द्वारा अपने किरायेदार के खिलाफ दायर मुकदमे में निष्कासन के लिए डिक्री पारित करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। इसलिए, निष्कासन के लिए डिक्री को रद्द कर दिया जाना चाहिए।

1976 का आर.एस.ए. नंबर 345।

11) 1976 के आर.एस.ए. 345 के तथ्य 1976 के आर.एस.ए. संख्या 344 के समान हैं और परिणामस्वरूप इस मामले में डिक्री भी रद्द की जा सकती है।

1977 का आर.एस.ए. नंबर 1518।

12) इस मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि वादी ने जनवरी, 1969 में विवाद में परिसर का निर्माण किया था। उन्होंने 2 फरवरी, 1969 के किराया नोट के माध्यम से 1 फरवरी, 1969 से प्रतिवादी को 30 रुपये प्रति माह के किराए पर इसे पट्टे पर दे दिया। उन्होंने प्रतिवादी को नोटिस देने के बाद 1973 में उसे बाहर निकालने के लिए मुकदमा दायर किया। किरायेदार द्वारा मुकदमे का विरोध किया गया था। ट्रायल कोर्ट ने किरायेदार के खिलाफ निष्कासन के लिए एक डिक्री पारित की। उन्होंने 17 जुलाई, 1976 को करनाल के वरिष्ठ अधीनस्थ न्यायाधीश के समक्ष अपील की। अपील दायर होने के बाद, हरियाणा के राज्यपाल द्वारा 27 अप्रैल, 1977 को हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली पर नियंत्रण) संशोधन अध्यादेश, 1977 को प्रख्यापित किया गया था और इसे 28 अप्रैल, 1977 को हरियाणा राजपत्र में प्रकाशित किया गया था। अध्यादेश की धारा 2 द्वारा मूल हरियाणा किराया अधिनियम की धारा 1 (3) में संशोधन किया गया था। अध्यादेश की धारा 2 संशोधन अधिनियम की धारा 2 के साथ असंगत है और इसलिए इसे पुन: पेश करना आवश्यक नहीं है। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने 22 जुलाई, 1977 को अपील पर निर्णय देते हुए हरियाणा किराया अधिनियम की संशोधित धारा 1 (3) को ध्यान में रखते हुए ट्रायल कोर्ट की डिक्री को उलट दिया। मकान मालिक दूसरी अपील में आया है। यह अपील 1976 के आरएसए नंबर 344 में की गई टिप्पणियों द्वारा भी पूरी तरह से कवर की गई है और खारिज किए जाने योग्य है। तथापि, यह उल्लेख करना प्रासंगिक हो सकता है कि हरियाणा अध्यादेश अगस्त, 1977 में निष्प्रभावी हो गया था। संशोधन अधिनियम 8 May_ 1978 को अस्तित्व में आया जब इसे हरियाणा राजपत्र में प्रकाशित किया गया था। यह मामला अब संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधित हरियाणा किराया अधिनियम द्वारा शासित होगा।

13) ऊपर दर्ज कारणों के लिए, मैं 1976 के आरएसए नंबर 344 और 345 को स्वीकार करता हूं और 1977 के आरएसए नंबर 1518 को खारिज करता हूं। इन मामलों की परिस्थितियों में, हालांकि, मैं पार्टियों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ देता हूं।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

हिमांशु जांगड़ा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी